

भरणामुक्ति का रहस्य

काशी पर बहुत सी पुस्तकें लिखी गई हैं, पर काशी के रमेशानघाट से आरंभ होने वाली यह पुस्तक अद्वितीय है। इसका कथा नायक अनोखा है और घटनाएं इससे भी अंधिक, बर्लिक कहें कि आश्चर्याभिभूत कर देने वाली। द्वैत-अद्वैत, तंत्र अथवा पराशरिफ पर लिखी जाने वाली पुस्तकें या तो शुद्ध ज्ञान देने वाली होती हैं या मात्र कल्पना को आधार बनाती हैं, पर इस पुस्तक के लेखक ने मध्यमार्ग का अनुसरण किया है, जहां अलौकिक जगत की भावभूमि में कथा नायक विचरण करता

है। एक नवजात शिशु संतानहीन दंपति को वरदान की तरह श्मशान में प्राप्त होता है। कहानी काशी के घाटों के वातावरण को साथ लेकर आगे बढ़ती है। उस बच्चे का पालन करने वाली मां का नाम यशोदा है। बच्चे के ऊपर एक नाग का बार-बार छत्रछाया करना मानो उसके अनोखे भविष्य का संकेत दे देता है। रोचक यह है कि मां भी उपन्यास में इस नाग की उपस्थिति होती है, वहां सर्वत्र चंद्रन की मुग्ध फैली रहती है। यह एक अपूर्व रहस्यलोक की सृष्टि है, जिसमें सामान्य पाठक शायद ही प्रवेश कर सकेंगे। कबीर की छाया पूरे उपन्यास को अतिरिक्त किए हुए है। कथा नायक जिसका नाम महा है, काशी के श्मशान घाटों के बीच पलता बढ़ता है। कुछ समय बाद उसका पिता आत्महत्या कर लेता है। मां महा को श्मशान में चिताओं का आगि संस्कार करते देख आर्तकित रहती है। पुस्तक में काशी के स्वर्णों को क्रमवार व्यख्या है। यह उपन्यास हमें हर घाट, हर मंदिर, गली तक मानो अंतर्लीला पकड़कर ले जाता है। पात्र कम हैं, पर उन्हीं आवश्यकतानुसार ही निबद्ध किया गया है। इस्माइल चाचा (या विस्माइल खान) भूत चाचा सहयोगी पात्र हैं। पात्र भले ही कम हैं,

परंतु कथा की पृष्ठभूमि एक विशाल फलक पर चिह्नित की गई है। आदि से अंत तक यह उपन्यास एक रहस्यमयी अनुभूति में पाठक को बांधे रहता है। लेखक कहीं अपने मुख्य पात्र में कबीर की छवि देखता है और कहीं उसे शिव का अंश मान लेता है। हैरत है कि इतनी परिष्कृत हिंदी और इतना कठिन गूढ़ विषय होते हुए भी उपन्यास को लयात्मकता कहीं नहीं टूटती।

कहानी एक रहस्यात्मक त्रिकोण सा बनाती है। काशीविधवा, महाशमशान और महा। महा के स्वर्णों और भावजगत में आने वाले कबीर, उसके नित्य सहचर इस्माइल चाचा तथा भूत चाचा अन्य बिंदु हैं, जो उपन्यास को आगे ले जाने में सहायक होते हैं। कबीर या तुलसी का महा के स्वर्ण में आना कोई अनोखा बात नहीं, अलौकिक विभूतियों के साक्षात्कार होते ही हैं। कभी स्वर्ण में, कभी तंद्रावस्था में और कभी साक्षात्।

महा, गुरु ज्ञान की खोज में काशी त्याग प्रयाग पहुंचता है। यहां कुंभ मेले में आने वाले नाग साधुओं का विह्वल है और उच्चतम अवस्था को प्राप्त अपौरुष संतो का भी। महा को याज्ञ भूत उतर से लेकर दक्षिण तक की है, इसी पदनात्रा के मध्य उसका सहचारी

बुढ़ेरा मिलता है। सभी ज्योतिर्लिंगों के दर्शन करते चारों धाम संपूर्ण कर व दोनों अयोध्या पहुंचते हैं। वहां बुढ़ेरा को छोड़कर महा

में कुछ नाटकीय मोड़ हैं, जैसे काशी में कबीर के साथ तुलसी का पदार्पण या फिर अकस्मात शिराड़ी के साई से साक्षात्कार। पाठक की जिज्ञासा पर ब्रेक वहां लगता है, जहां हर अभ्याय के अंत में ध्येय वाक्य लिखा होता है। 'बाद रख मैं तेरा गुरु नहीं।' कहीं न कहीं यह उपन्यास को गंभीरता को हल्का करता है।

भाषा अत्यंत शुद्ध और परिष्कृत है। अलौकिक शक्तियों के रहस्याभास, परा अनुभूतियों और उनसे उत्पन्न संवेगों पर इतने अधिकार से लिखना आसान नहीं है। इसके लिए इन विषयों के गहरे अध्ययन के साथ ही ऐसे अनुभूतियों का स्वयं साक्षात्कार भी

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक : काशी भरणामुक्ति

लेखक : मनोज मण्ड, रश्मि छाजेड़

मूल्य : 501 रुपए

प्रकाशन : शिव ओम् साई

प्रकाशन 95/3

वल्हभनगर, इंदौर



काशी चला जाता है। काशी में ही महा का निधन होता है। इस्माइल चाचा और भूत चाचा अब भी हैं। अंतिम संस्कार से पहले बुढ़ेरा वहां पहुंचता है और तैलंग स्वामी (महा के आध्यात्मिक गुरु) के निर्देशानुसार ही अंतिम संस्कार करवाता है। यहां बनती है महा की समाधि। उस चौडाल महायोगी की समाधि... जो अंततः अपना प्राणाय पा लेता है। उपन्यास

होना चाहिए। पुस्तक पर काफी परिष्कण किया गया है। अंदर बने स्केच सुंदर हैं, पर बेहतर मार्केटिंग के लिए भाषा का सरल होना और सर्वग्राह्य होना पहली शर्त है। इससे यह अन्य शर्तों में भी लोकप्रिय हो जाती। सृजन अच्छा है तो उसे जन-जन के हाथों में पहुंचना चाहिए, मिर्फ लाइब्रेरी में नहीं।

- सुनीता तिवारी

काशी पर बहुत सी पुस्तकें लिखी गई हैं, पर काशी के शमशानघाट से आरंभ होने वाली यह पुस्तक अद्वितीय है। इसका कथा नायक अनोज्ञा है और घटनाएं उससे भी अधिक, बर्लिन कहें कि आश्चर्याभिभूत कर देने वाली। ईत-अद्वैत, तंत्र अथवा पराशक्ति पर लिखी जाने वाली पुस्तकें या तो शुद्ध ज्ञान देने वाली होती हैं या मात्र कल्पना को आधार बनाती हैं, पर इस पुस्तक के लेखक ने मध्यमार्ग का अनुसरण किया है, जहां अलौकिक जगत को भवभूमि में कथा नायक विचारण करता है। एक नवजात शिशु संतानहीन वंशित को घरदान की तरह इमरशान में प्राप्त होता है। कहानी काशी के घाटों के वातावरण को साथ लेकर आगे बढ़ती है। उस बच्चे का पालन करने वाली मां का नाम यशोदा है। बच्चे के ऊपर एक नाग का बार-बार छत्रछाया करना माने उसके अनेकौं भविष्य का संकेत दे देता है। रोचक यह है कि जहां भी उपन्यास में इस नाग की उपस्थिति होती है, वहां सर्वत्र चंद्रन की मुद्रा फैली रहती है। यह एक अप्रूप रहस्यलोक की सृष्टि है, जिसमें सामान्य पाठक शायद ही प्रवेश कर सकेगा। कबीर की छाया पूरे उपन्यास को आविष्टित किए हुए है। कथा नायक जिसका नाम महा है, काशी के शमशान घाटों के बीच पलता बढ़ता है। कुछ समय बाद उसका पिता आत्महत्या कर लेता है। मां महा को शमशान में चिताओं का अग्नि संस्कार करते देख अतीव्रत रहती है। पुस्तक में काशी के स्थानों को क्रमशः प्लछाया है। यह उपन्यास हमें हर घाट, हर मींदर, गली तक मानी अंतर्ली चकड़कर ले जाता है। पात्र कम हैं, पर उन्में आकषयकतानुसार ही विक्रम किया गया है। इमशाल चान्वा (या विमिश्राल खान) भूत चाचा सहयोगी पात्र हैं। पात्र भले ही कम हैं,

भरणान्मुक्ति का रहस्य

परंतु कथा की पृष्ठभूमि एक विशाल फलक पर चित्रित की गई है। अर्थात् से अंत तक यह उपन्यास एक रहस्यमयी अनुभूति में पाठक को बांधे रहता है। लेखक कहीं अपने मुख्य पात्र में कबीर की छवि देखाता है और कहीं उसे शिव का अंश मान लेता है। हैरत है कि इतनी परिष्कृत हिंदी और इतना कठिन गुरु विषय होते हुए भी उपन्यास को लघुत्वकला कहीं नहीं टूटती।

कहानी एक रहस्यात्मक त्रिकोण सा बनाती है। काशीविद्यवाय, महाशमशान और महा। महा के स्वप्नों और भवभंगता में आने वाली कबीर, उसके नित्य सहचर इमशाल चाचा तथा भूत चाचा अन्व्य विंदु हैं, जो उपन्यास को आगे ले जाने में सहायक होते हैं। कबीर या तुलसी का महा के स्वप्न में आना कोई अनोज्ञा बात नहीं, अलौकिक विभूतियों के साक्षात्कार होते ही हैं। कभी स्वप्न में, कभी तंद्रास्थान में और कभी साक्षात्।

महा, गुरु ज्ञान की खोज में काशी त्याग प्रयाग पहुंचता है। यहां कुंभ मेले में आने वाले नागा साधुओं का जिक्र है और उच्चतम अवस्था को प्राप्त अपरीत संतो का भी। महा को याज्ञ भूत उतर से लेकर दक्षिण तक की है, इसी पदचाप के मध्य उसका सहचारी

बुद्धेश मिलता है। सभी ज्योतिर्लिंगों के दर्शन करते चारों भ्रम संपूर्ण कर व दोनों अयोध्या पहुंचते हैं। वहां बुद्धेश को छोड़कर महा

में कुछ नटकीय मोड़ हैं, जैसे काशी में कबीर के साथ तुलसी का पदार्पण या फिर अकस्मात् शिरडी के साईं से साक्षात्कार। पाठक की जिज्ञासा पर जेक वहां लगता है, जहां हर अश्वाय के अंत में श्रेय वाच्य लिखा होता है। 'चाद रख मैं तेरा गुरु नहीं।' कहीं न कहीं यह उपन्यास को गंधीरवा को हलका करता है।

भाषा अत्यंत शुद्ध और परिष्कृत है। अलौकिक शक्तियों के रहस्याभास, पर अनुभूतियों और उनसे उत्पन्न संवेगों पर इतने अधिकार में लिखना आसान नहीं है। इसके लिए इन विषयों के गहरे अध्ययन के साथ ही ऐसे अनुभूतियों का स्वयं साक्षात्कार भी

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक : काशी मरणान्मुक्ति

लेखक : मनोज टाकर,

रश्मि छाजेड़

मूल्य : 501 रुपए

प्रकाशन : शिव ओम् साईं

प्रकाशन 95/3

वल्हभनगर, इंदौर



काशी चला जाता है। काशी में ही महा का निधन होता है। इमशाल चाचा और भूत चाचा अब भी हैं। अंतिम संस्कार से पहले बुद्धेश वहां पहुंचता है और तैलंग स्वामी (महा के आश्चर्यात्मिक गुरु) के निर्देशानुसार ही अंतिम संस्कार करवाता है। यहां बनाती है महा की समाधि। उस चौदाल महायोगी की समाधि... जो अंततः अपना प्राण त्याग लेता है। उपन्यास

होना चाहिए। पुस्तक पर काफी परिष्कण किया गया है। अंदर बने स्केच सुंदर हैं, पर बेहतर मार्केटिंग के लिए भाषा का सरल होना और सर्वग्राह्य होना पहली शर्त है। इससे यह अन्य स्थानों में भी लोकप्रिय हो जाती। मूजन अच्चा है तो उसे जन-जन के हाथों में पहुंचना चाहिए, सिर्फ लाइब्रेरी में नहीं।

- सुनीता तिवारी